

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 14: अशुभ लक्षण

11 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



अर्जुन के द्वारका में रुक जाने पर, राजा युधिष्ठिर आकाश को भयंकर अपशकुनों से घिरता हुआ देखते हैं और अनुभव करते हैं कि भगवान् की उपस्थिति अब इस पृथ्वी से विदा लेने को है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

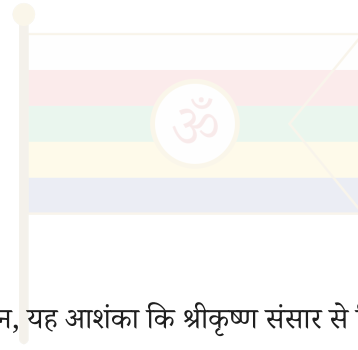
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। प्रथम स्कन्ध के इस चौदहवें अध्याय में हस्तिनापुर पर छाई शान्ति काँपने लगती है। अर्जुन श्रीकृष्ण और उनके परिजनों से मिलने द्वारका गए हैं, और महीने पर महीने बीत जाते हैं, पर वे नहीं लौटते। इसी नीरवता में राजा युधिष्ठिर देखते हैं कि संसार ही विचित्र होता जा रहा है — ऋतुएँ अस्वाभाविक हो चलीं, हृदय क्रूर होने लगे, और आकाश भयंकर लक्षणों से भर उठा। भयभीत मनुष्य के नहीं, अपितु एक भक्त के हृदय से वे इन लक्षणों में एक ही आशंका पढ़ते हैं: कि जो भगवान् उनके समस्त सौभाग्य के मूल हैं, वे अब अपनी उपस्थिति इस पृथ्वी से समेट लेने को हैं। यह अध्याय उस प्रेम का चित्र है जो वियोग को शब्दों में कहे जाने से पहले ही अनुभव कर लेता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 1 (प्रथम स्कन्ध)
- अध्याय: 14 (चतुर्दश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: अशुभ लक्षण और भगवान् श्रीकृष्ण का आसन्न अन्तर्धान
- प्रमुख वक्ता: पूज्य सूत जी, उग्रश्रवा (कथावाचक); राजा युधिष्ठिर
- प्रमुख श्रोता: नैमिषारण्य के ऋषिगण, शौनक जी के नेतृत्व में
- मुख्य स्थल: महाभारत-युद्ध के कुछ समय पश्चात् हस्तिनापुर नगर
- केन्द्रीय विषय: कलियुग के आगमन पर युधिष्ठिर को दिखे भयंकर अपशकुन, यह आशंका कि श्रीकृष्ण संसार से विदा लेने को हैं, तथा अर्जुन का द्वारका से शोकाकुल लौटना
- प्रमुख श्लोक-परास: स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 1-44
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय से सन्दर्भ

तेरहवें अध्याय में विदुर जी अपनी सुदीर्घ तीर्थयात्रा से लौटे और हस्तिनापुर में हर्षपूर्वक स्वागत पाया। उन्होंने अपने अन्धे बड़े भाई धृतराष्ट्र को उपदेश दिया कि वे अपने शेष मोह को त्यागकर संन्यास की ओर मुड़ें। उनकी बात मानकर वृद्ध राजा रात के अन्धकार में, अपनी अनुगत पत्नी गान्धारी के साथ, हिमालय की ओर चुपचाप चल दिए। जब उनके अकस्मात् चले जाने से युधिष्ठिर व्याकुल हो उठे, तब देवर्षि नारद आए और बताया कि धृतराष्ट्र गंगा की सप्तस्रोता धारा पर तप कर रहे हैं और शीघ्र ही योग द्वारा अपना शरीर त्याग देंगे; गान्धारी उनके पीछे अग्नि में प्रवेश करेंगी; और यह देखकर विदुर पुनः तीर्थाटन को निकल पड़ेंगे। नारद जी के वचनों से आश्चस्त होकर युधिष्ठिर ने शोक करना छोड़ दिया। यहीं से, जब अर्जुन अब भी द्वारका में हैं, चौदहवाँ अध्याय आरम्भ होता है।

समय का भयावह मोड़

पूज्य सूत जी ने आगे कहा। अर्जुन, उन्होंने बताया, अपने सम्बन्धियों — श्रीकृष्ण तथा अन्यो — से मिलने और यह जानने कि पुण्यश्लोक भगवान् की क्या लीला चल रही है, द्वारका गए थे। किन्तु अनेक महीने बीत गए, फिर भी वे नहीं लौटे।



अर्जुन के न लौटने पर मास पर मास बीतते हैं, और कलियुग के आगमन पर ऋतुएँ ही अपने क्रम से विचलित हो जाती हैं तथा समाज कलह में डूबने लगता है (श्लोक 2)।

व्यतीताः कतिचिन्मासास्तदा नायात्ततोऽर्जुनः ।

ददर्श घोररूपाणि निमित्तानि कुरुद्वहः ॥ २ ॥

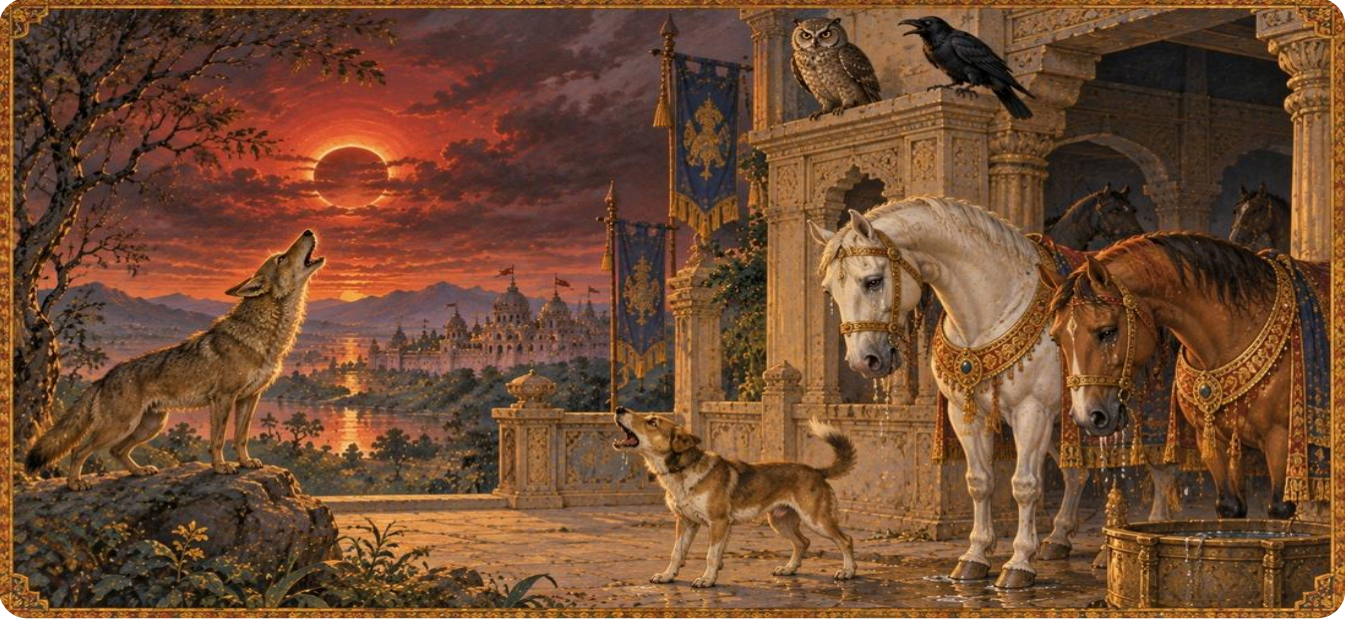
vyatītāḥ katicin māsās tadā nāyāt tato 'rjunaḥ dadarśa ghora-rūpāṇi nimittāni kurūdvahaḥ

अर्थ: कई महीने बीत गए, फिर भी अर्जुन नहीं लौटे; और इसी बीच कुरुश्रेष्ठ युधिष्ठिर ने भयंकर रूप वाले अपशकुन देखे। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 2)

समय ने ही एक भयावह मोड़ ले लिया था। ऋतुओं के लक्षण पूर्णतः बदल गए थे, और लोग पापमय आचरण में प्रवृत्त हो गए थे, उनके हृदय क्रोध, लोभ और असत्य से भरे हुए थे। लोगों का व्यवहार कुटिल हो चला; मित्रता तक छल से कलंकित हो गई; और माता-पिता और सन्तान के बीच, सम्बन्धियों के बीच, भाइयों के बीच, यहाँ तक कि पति-पत्नी के बीच भी कलह उठ खड़ी हुई। कलियुग की बढ़ती छाया के साथ मानव-स्वभाव में लोभ आदि दुर्गुणों की जड़ें जम गई, और सम्पूर्ण सृष्टि में महाविनाश के सूचक अपशकुन प्रकट होने लगे। यह सब देखकर राजा युधिष्ठिर अपने छोटे भाई भीम से बोले।

राजा अपशकुनों को पढ़ते हैं

युधिष्ठिर ने भीम को स्मरण कराया कि अर्जुन को सम्बन्धियों से मिलने और यह जानने कि श्रीकृष्ण क्या कर रहे हैं, द्वारका भेजा गया था। अब सात महीने बीत चुके थे, फिर भी उनका भाई नहीं लौटा था। तब राजा ने अपनी बेचैनी के नीचे छिपे भय को वाणी दी।



एक शृगाली उगते सूर्य की ओर विलाप करती है, घोड़े आँसू बहाते हैं, और अशुभ पक्षी रात-भर बोलते हैं — वे भयंकर लक्षण जिनका वर्णन युधिष्ठिर भीम से करते हैं।

अपि देवर्षिणादिष्टः स कालोऽयमुपस्थितः ।

यदात्मनोऽङ्गमाक्रीडं भगवानुत्सिसृक्षति ॥ ८ ॥

api devarṣiṇādiṣṭaḥ sa kālo 'yam upasthitaḥ yadātmāno 'ṅgam ākrīḍaṁ bhagavān utsisṛkṣati

अर्थ: कहीं वह समय तो नहीं आ पहुँचा जिसे देवर्षि नारद ने बताया था — वह समय जब भगवान् अपनी लीला के लिए धारण किए हुए उस प्रिय स्वरूप को त्याग देंगे? (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 8)

युधिष्ठिर ने कहा कि यह भगवान् की ही कृपा है जिसके कारण उन्हें सब कुछ प्राप्त है — उनका सौभाग्य और उनका राज्य, उनकी पत्नियाँ और उनके प्राण, उनके वंश की निरन्तरता, उनकी सन्तान, शत्रुओं पर उनकी विजय, और उच्चतर लोकों पर उनका अधिकार। अब उन्होंने भीम से आग्रह किया कि वे आकाश में, पृथ्वी पर, और अपने ही शरीरों में प्रकट होते उन लक्षणों को देखें, जो निकट ही किसी विपत्ति के सूचक हैं और जो मन को व्याकुल कर देते हैं।

उन्होंने स्वीकार किया कि उनकी अपनी बाईं जाँघ, बाईं आँख और बाईं भुजा बार-बार फड़क रही हैं, और उनका हृदय अकारण ही काँप उठता है।

ऊर्वक्षिबाहवो मह्यं स्फुरन्त्यङ्ग पुनः पुनः ।

वेपथुश्चापि हृदये आराद्वास्यन्ति विप्रियम् ॥ ११ ॥

ūrv-akṣi-bāhavo mahyaṁ sphuranty aṅga punaḥ punaḥ vepathuś cāpi hṛdaye ārād dāsyanti vipriyam

अर्थ: हे भाई, मेरी बाई जाँघ, आँख और भुजा बार-बार फड़क रही हैं, और मेरा हृदय भीतर ही भीतर काँप रहा है; निश्चय ही ये लक्षण शीघ्र ही कोई अप्रिय समाचार लाएँगे। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 11)

उन्होंने चारों ओर के अपशकुनों की ओर संकेत किया। एक शृगाली आग उगलती हुई उगते सूर्य की ओर विलाप कर रही थी; एक कुत्ता निर्भय होकर स्वयं राजा पर भौंक रहा था। शुभ पशु उनके बाई ओर से निकलते और अशुभ पशु दाई ओर मुड़ जाते, और उनके अपने घोड़े मानो आँसू बहा रहे थे। मृत्यु का सूचक कपोत, तथा उल्लू और उसका शत्रु कौआ — ये सब रात-भर जागकर अपनी भयानक बोली से उनका हृदय दहला देते थे, मानो सारे संसार को उजाड़ बना देना चाहते हों।

आकाश और पृथ्वी के लक्षण

ये अपशकुन केवल पक्षियों और पशुओं तक सीमित नहीं थे। दिशाएँ धुँधली दिखाई देती थीं; सूर्य और चन्द्र के मण्डल कुहासे के घेरे से घिरे प्रतीत होते थे; पर्वतों सहित पृथ्वी काँप उठती थी, और प्रचण्ड बिजली के साथ भयंकर वज्रपात होते थे। वायु ज़ोरों से बहती, धूल के साथ अन्धकार फैलाती, और मेघ मानो रक्त की वर्षा करते, जिससे सर्वत्र एक भयावह दृश्य उत्पन्न हो जाता।



आकाश धुँधला हो जाता है और मेघ मानो रक्त बरसाते हैं, जबकि देवताओं की प्रतिमाएँ रोती हुई प्रतीत होती हैं — गम्भीर लक्षण कि पृथ्वी ने भगवान् के चरणों का स्पर्श खो दिया है (श्लोक 21)।

सूर्य अपनी प्रभा खो बैठा और आकाश में ग्रह मानो परस्पर युद्ध करने लगे; आकाश और पृथ्वी दोनों प्रेतों और भूतों के समूहों से मानो अग्नि में जलते प्रतीत होते थे। जल-धाराएँ और नदियाँ, सरोवर और लोगों के मन — सब विक्षुब्ध थे; अग्नि घृत डालने पर भी प्रज्वलित न होती थी। बछड़े स्तनपान करने से इनकार करते, और गौएँ दूध न देतीं; पशु आँसू बहाते, उनके मुख से अश्रु ढुलकते, और बैल झुण्ड में आनन्दित न होते। देवताओं की प्रतिमाएँ ही मानो रोतीं, पसीना बहातीं और अपने आसनों से हिल जातीं, जबकि बाहरी जनपद, ग्राम, नगर, उद्यान, खानें और आश्रम सब उदास और अपनी शोभा से रहित दिखाई देते थे। इस सबसे युधिष्ठिर ने एक ही शोकपूर्ण निष्कर्ष निकाला।

मन्य एतैर्महोत्पातैर्नूनं भगवतः पदैः ।

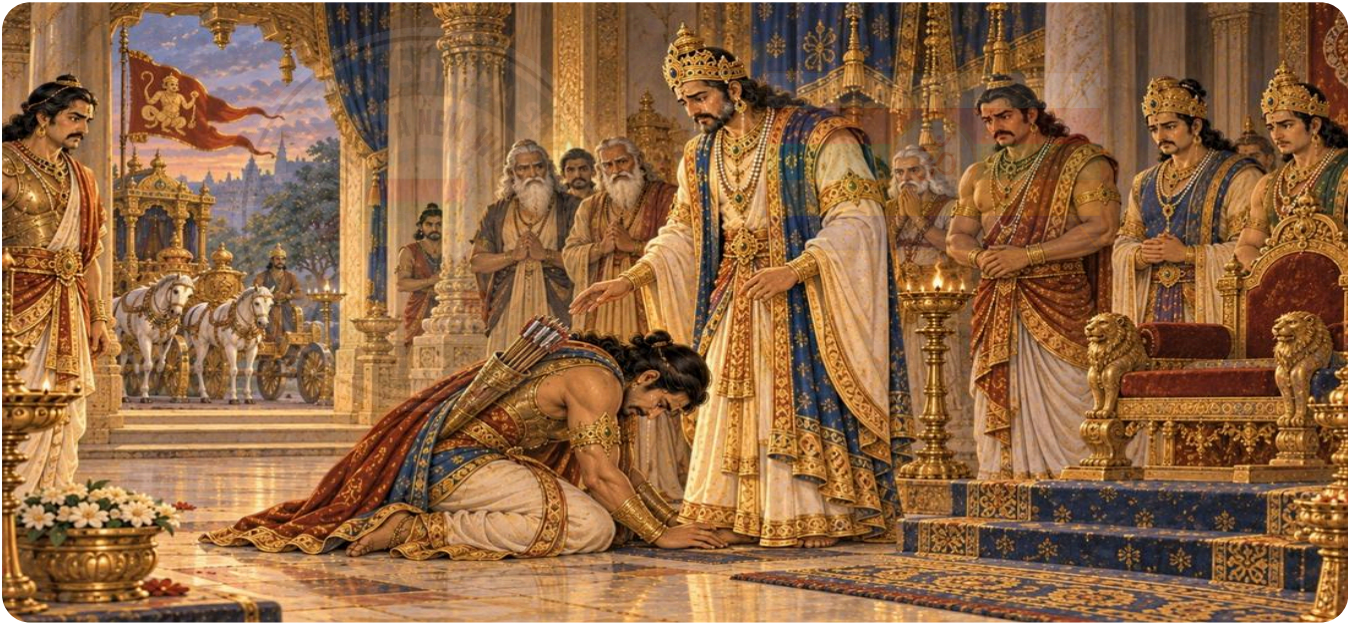
अनन्यपुरुषश्रीभिर्हीना भूर्हतसौभगा ॥ २१ ॥

manya etair mahotpātair nūnaṁ bhagavataḥ padaiḥ ananya-puruṣa-śrībhir hīnā bhūr hata-saubhagā

अर्थ: इन महान् अपशकुनों से मुझे निश्चय हो गया है कि पृथ्वी, भगवान् के उन चरणों के स्पर्श से वंचित होकर — जिनका मंगलमय सौभाग्य किसी अन्य पुरुष में नहीं — अपना सौभाग्य और अपनी शोभा खो चुकी है। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 21)

अर्जुन द्वारका से लौटते हैं

राजा जब इस प्रकार अपने व्याकुल विचार कह रहे थे, उनका हृदय देखे हुए अपशकुनों से भारी था, तभी जिसकी वे प्रतीक्षा कर रहे थे वह अन्ततः आ पहुँचा।



अर्जुन द्वारका से लौटते हैं, म्लान और उदास, और अपने बड़े भाई के चरणों में गिर पड़ते हैं, उनके कमल-सदृश नेत्रों से आँसू ढुलक रहे हैं (श्लोक 22)।

इति चिन्तयतस्तस्य दृष्टारिष्टेन चेतसा ।

राज्ञः प्रत्यागमद् ब्रह्मन् यदुपुर्याः कपिध्वजः ॥ २२ ॥

iti cintayatas tasya dṛṣṭārīṣṭena cetasā rājñāḥ pratyāgamad brahman yadu-puryāḥ kapi-dhvajaḥ

अर्थ: हे ब्राह्मण, राजा जब इस प्रकार चिन्ता में डूबे थे, उनका हृदय देखे हुए अपशकुनों से व्याकुल था, तभी अर्जुन — जिनके ध्वज पर हनुमान का चिह्न अंकित था — यदुओं की नगरी से लौट आए। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 22)

किन्तु उनके दर्शन ने राजा के भय को दूर करने के बजाय और बढ़ा दिया। अर्जुन एक विचित्र भाव लिए अपने भाई के चरणों में गिर पड़े, उनका मुख म्लान और झुका हुआ था, कमल-सदृश नेत्रों से आँसू ढुलक रहे थे। नारद के वचनों का स्मरण करते हुए युधिष्ठिर का हृदय व्याकुल हो उठा, और अपने अन्य सम्बन्धियों के बीच उन्होंने अपने भाई से प्रश्न करना आरम्भ किया।

क्या यदुगण और भगवान् कुशल हैं?

प्रेम और आशंका के आवेग में उनके प्रश्न उमड़ पड़े। क्या उनके सम्बन्धी — मधु, भोज, दाशार्ह, अर्ह, सात्वत, अन्धक और वृष्णि — द्वारका में सुखी हैं? क्या उनके पूज्य नाना शूरसेन कुशल हैं, और क्या उनके मामा वसुदेव तथा उनके भाई स्वस्थ हैं? क्या वसुदेव की सातों पत्नियाँ — देवकी और उनकी बहनें — अपने पुत्रों और पुत्रवधुओं सहित सकुशल हैं? क्या राजा उग्रसेन और उनके भाई देवक अब भी जीवित हैं? क्या कृतवर्मा, अक्रूर, जयन्त, गद, सारण और सात्रुजित कुशल हैं, और क्या दिव्य बलराम, सात्वतों के स्वामी, सुखी हैं? क्या प्रद्युम्न, वृष्णि-वीरों में श्रेष्ठ, कुशल हैं, और क्या पराक्रमी अनिरुद्ध समृद्ध हैं? क्या साम्ब और श्रीकृष्ण के अन्य पुत्र, तथा उद्धव और अन्य भक्त परिचर, सब बलराम और कृष्ण की भुजाओं से रक्षित होकर कुशल हैं — और क्या वे अब भी पाण्डवों को स्नेह से स्मरण करते हैं? तभी वह प्रश्न आया जो उनके हृदय के केन्द्र में था।



युधिष्ठिर पूछते हैं कि क्या ब्राह्मणों के हितैषी और अपने भक्तों के प्रिय भगवान् गोविन्द, अपने सम्बन्धियों के बीच महान् सुधर्मा सभा-भवन में सुखपूर्वक विराजमान हैं (श्लोक

34)।

भगवानपि गोविन्दो ब्रह्मण्यो भक्तवत्सलः ।

कच्चित्पुरे सुधर्मायां सुखमास्ते सुहृद्वृतः ॥ ३४ ॥

bhagavān api govindo brahmaṇyo bhakta-vatsalaḥ kaccit pure sudharmāyām sukham āste suhṛd-vṛtaḥ

अर्थ: और क्या भगवान् गोविन्द — ब्राह्मणों के हितैषी और अपने भक्तों पर स्नेहपूर्वक अनुरक्त — अपनी नगरी की सुधर्मा सभा में अपने सम्बन्धियों के बीच सुखपूर्वक विराजमान हैं? (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 34)

उन्होंने भगवान् और उनके जनों की महिमा का वर्णन जारी रखा: कैसे परम पुरुष समस्त लोकों के कल्याण के लिए यदुओं के बीच निवास करते हैं, बलराम सदा उनके साथ हैं; कैसे यदुगण अपनी नगरी में भगवान् विष्णु के पार्षदों के समान आनन्द करते हैं, उनकी बलिष्ठ भुजाओं से रक्षित; और कैसे महान् यादव वीर निर्भय होकर उस प्रसिद्ध सुधर्मा सभा-भवन में विचरते हैं।

युधिष्ठिर के कोमल प्रश्न

अन्ततः राजा दूसरों के कुशल-क्षेम से हटकर स्वयं अर्जुन की ओर मुड़े, और उनके प्रश्न कोमल चिन्ता में ढल गए।



राजा शोकाकुल अर्जुन से कोमलता से प्रश्न करते हैं, यहाँ तक कि उनका अन्तिम, गहनतम भय कह उठता है: कि उनका भाई स्वयं श्रीकृष्ण से बिछड़ गया है (श्लोक 44)।

क्या अर्जुन स्वस्थ हैं? उनके मुख की कान्ति मानो जाती रही है। क्या उन्हें उचित सत्कार नहीं मिला, या उनके दीर्घ प्रवास के दौरान उनके साथ अनादर हुआ? क्या किसी ने उन्हें कटु वचनों से आहत किया? क्या उन्होंने कभी किसी याचक की प्रार्थना ठुकराई, या स्वेच्छा से दिए गए किसी वचन को पूरा करने में चूक की? क्या उन्होंने किसी ब्राह्मण, बालक, गौ, वृद्ध या रोगी जन, स्त्री, अथवा शरण में आए किसी असहाय प्राणी को आश्रय देने से इनकार किया? युधिष्ठिर ने अपने भाई के शोक के हर सम्भव कारण पर विचार किया — और फिर, उसे न पाकर, वह भय कहा जिसे उन्होंने सबसे देर तक रोक रखा था।

कच्चित् प्रेष्ठतमेनाथ हृदयेनात्मबन्धुना ।

शून्योऽस्मि रहितो नित्यं मन्यसे तेऽन्यथा न रुक् ॥ ४४ ॥

kaccit preṣṭhatamenātha hṛdayenātma-bandhunā śūnyo 'smi rahito nityaṁ manyase te 'nyathā na ruk

अर्थ: अथवा क्या ऐसा है कि अपने परम प्रिय सखा और आत्मस्वरूप श्रीकृष्ण से बिछुड़कर तुम अपने को नितान्त रिक्त और अनाथ अनुभव कर रहे हो? क्योंकि तुम्हारे शोक का मुझे और कोई कारण नहीं दिखता। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 44)

इसी प्रश्न के साथ अध्याय समाप्त होता है — उत्तर, और उसमें छिपा वह महान् शोक, आगे आने वाले अध्याय के लिए रोक लिया गया है।

प्रमुख शिक्षाएँ

1. संसार की शोभा भगवान् की उपस्थिति पर टिकी है। युधिष्ठिर विचलित ऋतुओं, रोती गौओं और रक्त-सदृश मेघों में एक ही सत्य पढ़ते हैं: कि पृथ्वी ने अपना “सौभाग्य खो दिया” है क्योंकि वह भगवान् के चरणों का स्पर्श खोती जा रही है (श्लोक 21)। जहाँ ईश्वर का सम्मान होता है, वहाँ जीवन सामंजस्य में फलता-फूलता है; जहाँ उनकी उपस्थिति हट जाती है, वहाँ प्रकृति भी अव्यवस्था में गिर पड़ती है।
2. भक्त वियोग से डरता है, विपत्ति से नहीं। राजा अपने सिंहासन, अपनी सुरक्षा या अपने धन के लिए शोक नहीं करते। उनका एकमात्र भय यह है कि भगवान् कहीं विदा तो नहीं लेने वाले (श्लोक 8-9)। भक्त के लिए प्रत्येक शुभ वस्तु का मूल्य केवल भगवान् के उपहार के रूप में है, और स्वयं भगवान् ही वह एकमात्र निधि हैं जिनका वियोग असह्य है।
3. विधाता संकेतों द्वारा बोलते हैं, और प्रेम उन्हें पढ़ना सीख लेता है। युधिष्ठिर इन लक्षणों की व्याख्या अन्धविश्वास से नहीं, अपितु भगवान् की इच्छा के प्रति सजग हृदय से करते हैं, नारद के ही वचनों का स्मरण करते हुए (श्लोक 22-24)। भक्ति आत्मा को दैवी विधान की गतियों के प्रति संवेदनशील बना देती है।
4. कलियुग का आगमन हृदय के भीतर धर्म का हास है। राजा जो भ्रष्टा देखते हैं, वह सबसे पहले नैतिक है — लोभ, असत्य, छल, और निकटतम सम्बन्धों का टूटना (श्लोक 3-5)। कलियुग का वर्णन केवल एक कालखण्ड के रूप में नहीं, अपितु मानव-हृदय के कठोर होने के रूप में हुआ है — अपने जीवन में सत्य और स्नेह की रक्षा करने की एक चेतावनी।
5. भगवान् ही भक्त के आत्मस्वरूप हैं। युधिष्ठिर का अन्तिम प्रश्न कृष्ण को अर्जुन का “परम प्रिय सखा और आत्मस्वरूप” कहता है (श्लोक 44)। भगवान् से बिछुड़ना अपने ही अस्तित्व से रिक्त हो जाना है। यही सच्ची भक्ति की माप है: कि प्रियतम हमें अपने प्राणों से भी प्रिय हो जाएँ।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में एक कोमलता है जिसे भयावह अपशकुनों के नीचे सहज ही अनदेखा किया जा सकता है। युधिष्ठिर एक महान् सम्राट हैं, युद्ध में विजयी, अपने सिंहासन पर सुरक्षित — फिर भी उनकी अपनी भुजा का फड़कना उन्हें भयभीत कर देता है, क्योंकि वह फुसफुसाता है कि कृष्ण संसार को छोड़ रहे हैं। हम प्रायः अपने जीवन को उसी से मापते हैं जिसे हम थाम सकते हैं: हमारी सुरक्षा, हमारे लोग, हमारी उपलब्धियाँ। भागवत कोमलता से इस माप को उलट देता है। ये सब, वह स्मरण कराता है, उधार का प्रकाश हैं; इनका सच्चा स्रोत भगवान् हैं, और जब वे हट जाते हैं, तब यह उधार का प्रकाश मन्द पड़ जाता है। इस प्रकार ईश्वर से प्रेम करना उनकी निकटता को अपनी श्वास के समान और उनकी अनुपस्थिति को एक प्रकार की मृत्यु के समान अनुभव करना है। यह एक कठिन प्रेम है, पर एक मुक्त करने वाला भी, क्योंकि यह हृदय को यह सिखाता है कि वह क्षणभंगुर सम्पत्तियों में नहीं, अपितु उस एकमात्र उपस्थिति में विश्राम करे जो अपने पुकारने वालों को कभी सचमुच नहीं छोड़ती।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज एक शान्त क्षण निकालकर अपने जीवन की शुभ वस्तुओं को एक-एक कर नाम दें — जिन्हें आप प्रेम करते हैं, जो आश्रय आपको प्राप्त है, आपके शरीर का बल, आपके मन की शान्ति — और इनमें से प्रत्येक को भगवान् के उपहार के रूप में उन्हें ही लौटा दें, हृदय में कोमलता से कहते हुए, “यह भी आपका ही है।” ऐसा करते हुए युधिष्ठिर का स्मरण करें, जिन्होंने प्रत्येक वरदान में कृष्ण की कृपा देखी। इस अभ्यास का अन्त भगवान् के नाम के एक प्रेमपूर्ण स्मरण से करें, जिससे जीवन की बदलती ऋतुओं में चाहे कुछ भी हो, हृदय उन्हीं को थामे रखना सीख ले जो कभी नहीं जाते।

महत्त्वपूर्ण श्लोक

ऊपर दिखाए गए श्लोकों के अतिरिक्त, एक श्लोक समस्त अध्याय के मोड़ को अंकित करता है, जहाँ राजा पहली बार अपनी आशंका को वाणी देते हैं।

निमित्तान्यत्यरिष्ठानि काले त्वनुगते नृणाम् ।

लोभाद्यधर्मप्रकृतिं दृष्ट्वोवाचानुजं नृपः ॥ ५ ॥

nimittāny atyariṣṭāni kālē tv anugate nṛṇām lobhādy-adharma-prakṛtiṁ dṛṣṭvovācānujaṁ nṛpaḥ

अर्थ: अत्यन्त अशुभ अपशकुनों को, और यह देखकर कि कलियुग के निकट आते ही मनुष्यों का स्वभाव लोभ आदि दोषों से अधर्ममय हो गया है, राजा ने अपने छोटे भाई से कहा। (स्कन्ध 1, अध्याय 14, श्लोक 5)

उपसंहार

प्रथम स्कन्ध का यह चौदहवाँ अध्याय एक प्रेमपूर्ण हृदय की संवेदनशीलता का अध्ययन है। जब अर्जुन द्वारका में रुके हैं, राजा युधिष्ठिर ऋतुओं को विचित्र होते, समाज को कलह में डूबते, और आकाश को भय से भरते देखते हैं। जहाँ कोई और केवल विपत्ति देखता, वहाँ वे एक ही हानि की छाया देखते हैं: कि श्रीकृष्ण, उनके परिवार को प्राप्त प्रत्येक वरदान के मूल, कहीं अपनी उपस्थिति इस पृथ्वी से समेट न लें। जब अर्जुन अन्ततः लौटते हैं — म्लान, उदास और मौन — तब राजा का भय और गहरा हो जाता है, और वे यदुओं और भगवान् के विषय में व्याकुल, कोमल प्रश्नों की झड़ी लगा देते हैं, यहाँ तक कि अन्त में वे उस एक शोक को नाम दे देते हैं जिससे वे सर्वाधिक डरते हैं: कि उनका भाई स्वयं कृष्ण से बिछुड़ गया है। अध्याय हमें इसी शोक की देहरी पर छोड़ जाता है, यह सिखाते हुए कि भगवान् से सच्चा प्रेम करना उनकी निकटता को अपने प्राणों के समान अनुभव करना और उनसे बढ़कर किसी को प्रिय न मानना है।

श्रीमद्भागवतम् का यह दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ और आभार

मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (हिन्दी/अंग्रेज़ी), प्रथम स्कन्ध, चतुर्दश अध्याय, पुस्तक-पृष्ठ 55–58।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम् • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट। पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेख एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण भक्तिमयी पुनर्कथा है। किसी प्रकाशक का अनुवाद या टीका इसमें उद्धृत नहीं की गई है; श्लोकों की “अर्थ” पंक्तियाँ मौलिक श्रद्धापूर्ण भावानुवाद हैं। यह लेख यह अभिप्राय नहीं रखता कि कोई प्रकाशक, पुस्तकालय अथवा संस्था इसका प्रायोजन या समर्थन करती है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-1-adhyay-14-ashubh-lakshan-krishna-antardhan.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

